Vol. 9, Issue: 5, May: 2021
ISSN:(P) 2347-5404 ISSN:(O)2320 771X

हिन्दी की प्रगति एवं विकास में अहिन्दी प्रदेशों की देन (केरल के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अभिलाशा शुक्ला

१.भूमिका

सभ्यता का विकास भाषागत विकास का पर्याय होता है। सभ्यता की यह सांस्कृतिक परिणति अपनी अभिव्यक्ति के लिए परिस्थितिक परिवेषों के अधीन एक ऐसी भाषा का विधान करती है जो उसकी समग्रता की सषक्त वाहिका बन सके। इस रूप में समान संस्कृति और समान भाषा की संरचनाएँ एक दूसरे से अपरिहार्य रूप में एकान्वित हो जाती है। भारतीय संस्कृति का निर्माण और विकास एक विषिष्ट भौगोलिक एवं ऐतिहासिक परिपेक्ष्य में हुआ है। वैसे भी छुट–पुट प्रादेषिक विभेदों के होते हुए भी कष्मीर से कन्याकुमारी और कच्छ से कामरूप तक भारतीय संस्कृति की आत्मा एक रही है। इसी के अनुरूप अखिल भारतीय भाषा का निर्माण भी स्वतः होता आया है। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंष काल तक राष्ट्रभाषा के विकास की यही परंपरा अक्षुण्ण रही । वस्तुतः हर भाषा के अपने शब्द–समूह व मुहावरे के प्रयोग होते है, ये बाते जनता और लेखकों के मानस में संस्कारतः स्थित होती है और उनके लेखन में भातृभाषा के ये संस्कार स्वतः उतरते जाते है। ये शब्द मुहावरे एवं प्रयोग भाषा की निधि होते है। अतः यदि अहिन्दी लेखकों के लेखन के माध्यम से ये शब्द ये मुहावरे और ये प्रयोग हिन्दी में अवंतरित हो तो स्वयं हिन्दी की समृदि ही होगी।

ईसा की दसवीं शताब्दी के आसपास अनेक कारणों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का क्रम परिलक्षित होता है। किंतु इस काल में भी संतो, साधुओं महात्माआं और पर्यटकों के योगदान से ब्रजभाषा ने संपर्क भाषा के रूप में बहुत कुछ राष्ट्रवादी की भूमिका अदा की । महाराष्ट्र के ज्ञानदेव, नामदेव, एकानाथ और तुकाराम आदि, गुजरात के नरसी मेहता, दादू दयाल, गौरीबाई, संत प्राणनाथ, पंजाब के गुरू नानक, गुरू अंगद सिंह और गुरू गोविंद सिंह, कष्मीर के केष्व भट्ट और श्रीलाल झाडू, असम के शंकरदेव, माध्यवदेव आदि, बंगाल के चैतन्य महाप्रभु, ज्ञानदास और गोविन्द दास, उड़ीसा के राय रामान्नद भटृनायक, राजकवि प्रताप रूद्रदेव, जगन्नाथदास, आनन्ददास, उधृवदास आदि असंख्य ज्ञात अज्ञात कवियों ने ब्रजभाषा में रचना करके इसके अखिल भारतीय स्वरूप के निर्माण में अविस्मरणीय योगदान दिया। राष्ट्र के पूर्वंचल में तो ब्रजभाषा की एक 'बोली' के रूप ब्रजबोली का प्रचलन होता रहा और असम, बंगाल तथा उड़ीसा में इस भाषा में प्रभूत साहित्य का सृजन भी हुआ। भक्ति के साथ–साथ भक्ति आंदोलन के प्रसार के क्रम में राष्ट्र वाणी के निर्माण का सर्वाधिक कार्य दक्षिण के आचार्यो ने सपंन्न किया है। तमिलनाडू के रामानन्द और आन्ध्र के बल्लाभाचार्य के द्वारा किये गये कार्य स्वतः प्रमाणस्वरूप है। केरल में हिन्दी 'गुसाई' भाषा के नाम से जानी जाती थी। भक्ति आंदोलन के दिनों में दक्षिण प्रदेषों में इसका बड़ा सम्मान भी था। इसी राष्ट्रीय लक्ष्य के अधीन ब्रजभाषा मराठा–दरबार की सहवर्ती भाषा बनी थी । वहॉ केवल बृजभाषा के कवियों को स्थान हीं नहीं प्रदान किया गया वरन् छत्रपित षिवाजी, शंभाजी, साहूजी प्रभूति राजाओं ने स्वयं इसी भाषा में रचना करके इसके राष्ट्रीय स्वरूप का संबर्धन किया है।

२. हिन्दीतर प्रदेशों की देन

हिन्दी की प्रगति और विकास में प्रत्येक हिन्दीतर प्रदेष की उल्लेखनीय देन रही है। हिन्दी भाषा के विकास में और हिन्दी साहित्य की समृधि में हिन्दीत्तर प्रदेषों ने पर्याप्त योगदान दिया है। प्रत्येक हिन्दीत्तर प्रदेष में हिन्दी की प्रगति के लिए और हिन्दी साहित्य भंडार को समृधृ बनाने के लिए किये गये महत्वपूर्ण कार्यो को लेखा–जोखा प्रस्तुत करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य अपने वर्तमान स्वरूप को हासिल करने में हिन्दी – प्रदेष की अपेक्षा हिन्दीत्तर प्रदेषों के प्रति अधिक ऋणी है। हिन्दीत्तर प्रदेष भी दो प्रकार के है। कुछ ऐसे प्रदेष है जहॉ हिन्दी से निकटता रखनेवाली भाषाएँ आर्य परिवार की ही भाषाएँ व्यवृहत होती है। मराठी, गुजराती, पंजाबी, डोंगरी, कष्मीरी, असमी बंगाली और उड़िया ऐसी भाषाएँ हहै जो हिन्दी की भगिनी भाषाएँ कहलाती है। चूँकि इन भाषा प्रदेषों का संबंध हिन्दी प्रदेष से निकट का रहा है । अतः प्रारंभ से ही विपुल मात्रा में इन प्रदेषो

में हिन्दी साहित्य साधना हुई है और इन प्रदेषों के साहित्यकारों को हिन्दी में रचना करने में कोई विषेष कठिनाई नहीं हुई। हिन्दी को समृधृ बनाने में प्रत्येक हिन्दीत्तर प्रदेष की कुछ विषेष देन रही है। पत्रकारिता के क्षेत्र में बंगाल भाषियों ने हिन्दी को बहुत कुछ दिया है। आधुनिक युग में भी महाराष्ट्र के हिन्दी साहित्यकारो ने हिन्दी को बहुत कुछ दिया है। गजानन माधव मुक्ति बोध, प्रभाकर माचवे, अनन्तगोपाल शेवो, काकासाहब फालेलेकर और आचार्य बिनोवा भावे, ये सब मराठी भाषी होते हुए भी हिन्दी के जानेमाने लेखक है। आधुनिक युग में भी पंजाब और जम्मू–कष्मीर के कितने ही महान और सुपरिचित लेखक हिन्दी साहित्य के गौरव को बढ़ा रहे है। उपेन्हनाथ अष्क, मोहन, राकेष, यषपाल और डॉ. महीप सिंह ये सब पंजाब की उपलब्धियॉ है। डौगरी भाषा–भाषी डॉ. कर्णसिंह की हिन्दी सेवाएँ विषेष उल्लेखनीय है। इसी तरह असम और उड़ीसा में भी असंख्य प्रतिभाओं ने हिन्दी की गरिमा को बढ़ाया है। तमिलनाडू ने भी हिन्दी को बहुत कुछ दिया है । हिन्दी के विकास में तमिल प्रेदष का योगदान दूसरे प्रदेषों की अपेक्षा कम नहीं है। इस प्रकार प्रत्येक हिन्दोतर प्रदेष की हिन्दी सेवा का विस्तृत विवेचन करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हिन्दी में जो कुछ श्रेष्ठ और विषिष्ट है, उसमें से बहुत कुछ हिन्दीत्तर प्रदेषों की देन है। यह ध्यान देने की बात है कि हिन्दी में आरंभिक पत्र पत्रिकाओं का प्रकाषन अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में ही हुआ और इसकी पुष्ट परम्परा स्थापित करने वाले पत्रकार भी अहिन्दी भाषा–भाषी थे। 'उदन्त मार्तण्ड (1826) 'संगदूत' (1929) सुधाकर समाचार सुधा–दर्पण आदि इसके प्रमाण है। वैसे तो बीसवी शताब्दी के आंरभिक दषकों में अहिन्दी भाषा के प्रयत्नों से अनेक पत्र–पत्रिकाएँ निकलती रही ।

माधवसप्रे ने छत्तीसगढ़ मित्र तथा हिन्दी केसरी का संपादन किया। सिंघृनाथ माधव आगरकर ने खंडवा से स्वराज्य निकाला। इसी तरह की कमलिनी नामक पत्रिका ज्योर्तिमयी ठाकुर ने भी प्रारंभ की थी। संपादकचार्य लक्ष्मीनारायण, रामानंद, चट्टोपाध्याय, मनोहरकृष्ण गोलपकर आदि ने पत्र–पत्रिकाओं के द्वारा हिन्दी की महती सेवा की । हिन्दी का छायावादी पत्र तो हिन्दी पत्रकारिता का स्वर्णयुग ही माना जा सकता है। दक्षिण भारत में हिन्दी पत्रों का प्रकाषन अन्य प्रदेषों की अपेक्षा किंचित विलंब से हुआ फिर भी वहॉ की पत्र–पत्रिका को राष्ट्रीय मंच पर लाने का बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य किया। इस प्रकार हम देखते है कि हिन्दी पत्र कारिता के क्षेत्र में अहिन्दी भाषा–भाषियों का योगदान सभी दृष्टिकोण से विषिष्ट रहा है।

३. हिन्दी साहित्य को केरल की देन

प्राचीनकाल में केरल के अंतर्गत कई छोटे–छोटे स्वतंत्र राज्य थे। वहॉ के शासको की सेना में रियासतों की तरह मराठा, राजपूत और पठान वंष के सैनिक भी नियुक्त होते थे। उनके साथ संपर्क बनाये रखने वाले केरलीय सिपाही और अन्य कर्मचारी हिन्दी में बोलने की योग्यता प्राप्त करना जरूरी मानते थे। उनके संपर्क आनेवाले लोग भी व्यापारी,कारीगर, मजदूर, नाई, धोबी, आदि हिन्दी का व्यवहारिक ज्ञान रखते थे। केरल के प्रमुख बंदरगाहोहं तथा अन्य व्यापार केन्द्रो मे वर्षा पहले से ही उत्तर भारत में मारवाड़ी, गुजराती और मुसलमान लोग व्यापार के लिए आते जाते रहे है। उनमें से कुछ यहॉ वस भी गये। वे अपनी टूटी–फूटी मृतभाषा मिश्रित हिन्दुस्तानी में यहॉ के लोगो से बातचीत करते थे। उनके साथ रोजमररा की भाषा की जरूरत पड़ी तो उन व्यापार केन्द्रो और बंदरगाहों के लोग भी हिन्दुस्तानी सीखने लगे। अभी भी सैकड़ो लोग उन केन्द्रो में रहते हैं जो अपनी उस पुरानी खिचड़ी भाषा को हिन्दुस्तानी भाषा में परस्पर विचार विनिमय करते है। केरल में हिन्दी प्रचार की पूर्णपीठिका की चर्चा के संदर्भ में केरल के उन दक्खिन मुसलमानो का भी उल्लेख अनिवार्य है जिनके पूवर्ज प्रमुख रूप से दक्खिन मुस्लिम राज्यों से केरल में आकर बस गये थे। दक्खिन मुसलमानों के बीच कई कवि भी हुए थे, जिनकी अधिकाष रचनाएँ अब नष्ट हो चुकी है। कहा जाता है कि उन्नीसवी शताब्दी में तिरूवनन्तपुरम के सखर खॉ और अब्दुल जलील हजरत सूफी गीतकार थे। कण्णूर के 'अतहर' और तलष्योरी के खासिम खॉ भी बड़े सरस कवि बताये जाते है। उपयुक्त बातों से यह सिघृहोता है कि केरल में हिन्दी या हिन्दुस्तानी का प्रवेष वर्षा पूर्व ही हो चुका था। धार्मिक, सांस्कृतिक तथा व्यवाहरिक क्षेत्रो में उसका उपयोग स्वाभाविक ही था। प्राय सभी दक्षिणी प्रदेषों में न्यूनाधिक मात्रा में उस समय हिन्दी का व्यवहार जो हआ उसके मूल कारण एक समान रहे होगे।

४. मौलिक कहानियॉ

स्वातंत्र–पूर्व कास से आज तक केरल में मौलिक हिन्दी कहानी – लेखन का कार्य निरंतर चलता आ रहा है। स्वतंत्रा पूर्व काल के केरलीय हिन्दी कहानीकारों की रचनाओं में सर्वश्री पी.के. केषवन नायर, एम.पी. माधव कुरूप, सी.जी. गोपालकृष्णन, एन. वेकिटेष्वरन और श्रीमती माधवविकुट्टि की कहानियॉ विषेष रूप से उल्लेखनीय है। हिन्दी प्रचारक जैसी पत्रिकाओं में इनकी कहानियॉ प्रकाषित हुई है।

स्वातंत्रोत्तर काल में केरल में हिन्दी कहानी लेखन के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई। केरल की हिन्दी पत्रिकाओं की ओर से इस दिषा में जो योगदान हुआ है वह कम महत्वपूर्ण नहीं है। इन पत्रिकाओं ने मौलिक लेखन की काफी प्रोत्साहन दिया । 'अरिवंद' आर्यकेरली' 'केरल भारती' राष्ट्रवाणी 'युग प्रभात' जैसी केरल की हिन्दी पत्रिकाओं के पुराने अंको में केरलीय लेखकों की मौलिक कहानियॉ से बिखरी पड़ी है। जिनमें सी. के. परमेष्वर पिल्ले की कहानी 'ढाई अच्छर' और 'श्री रंजन की 'लेखक की चालाकी' श्री के. कृष्ण मिलोन की 'छः रूपये तीन आने' उल्लेखनीय है। 'केरल भारती' बीच–बीच में केरल के हिन्दी विद्यार्थियों और लेखकों के लिए कहानी प्रतियोगिता चलाती थी, जिससे नई प्रतिभाओं को विकास प्राप्त करने का सुअवसर भी मिलता रहा।

५. मौलिक कविताएँ

हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं में आधुनिक काल में केरलियों का सर्वाधिक योगदान कविताओं के क्षेत्र में है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बहुत पहले ही हिन्दी कविता लेखन के क्षेत्र में केरल में काफी कार्य होने लगा स्वतन्त्रय – पूर्वकाल की कविताएँ वस्तुत राष्ट्रीय चेतना एवं स्वतन्त्रय भावना की वाहिकाएँ थी। इस काल प्रमुख करेलीय हिन्दी कवियों में श्रीमती लक्ष्मिकुष्टि देवी, श्रीमती भारती देवी, सर्वश्री टी.के. गोविन्दन तथा विमल 'केरलीय' के नाम विषेष रूप से उल्लेखनीय है। श्रीमती लक्ष्मीकुष्टि देवी की कविताओं में उनकी 'आहा शीर्षक कविता सबसे अधिक आकर्षक और लोकप्रिय रही है। यह कविता जुलाई 1929 की हिन्दी प्रचारक 'पत्रिका' में प्रकाषित हुई । ठीक ऐसे ही श्रीमती भारती देवी की कविताओं का भी आधार स्वतंत्रता की तीव्र अभिलाषा है। ''हिन्दी प्रचारक'' के जुलाई 1923 के अंक में प्रकाषित उनकी कविता 'हे संध्ये' की कुछ पक्तियॉ प्रस्तुत है। हेसन्ध्ये, रजनी अन्धकारमय है, पीड़ाजनक है मुझे निस्प्राण बनाने वाली है। श्री टी.के. गोविन्दन की कविताओं का आधार गॉधी जी का जवीन दर्षन है। आपने अपनी कवितओं के माध्यम से अस्पृष्यता, दासता, अनाचार, स्त्रियों की विवषता श्रम जीवियो की दयनीय अवस्था, किसानों का दाहक दारिद्रम, आदि प्रष्न कवि के हृदय का मंथन करते हैं। कविता 'अच्छूत की आह' कविता जो इन्हीं तथ्यों पर प्रकाष डालती है।

''हाय कुओं से जल भरने का
हमें कही अधिकार नहीं,
विद्यालय में पढ़ने का भी
हमे पूर्ण अधिकार नहीं।।''

श्री विमल 'केरलीय' की कविताओं का दार्षनिक आधार प्रबल है।

''यह कुंभ यहॉ रह जाता
यह अम्बु कहॉ बह जाता है,
पहले तो इसमें था जल भर,
टपक रहा छेदों से बाहर ''

इस प्रकार स्वातंत्रय पूर्ण काल में केरलीय हिन्दी कवियों द्वारा रचित हिन्दी कविताओं का सभ्यक अध्ययन करने से यह स्पष्ट होगा कि स्वातंत्र पूर्व काल में हिन्दी प्रदेष रचित कविताओं की प्रवृत्तिगत विषेषताओं से इधर की कविताएँ कोई अंतर नहीं रखती है। तत्कालीन राजनीतिक सामाजिक तथा आर्थिक वातावरण को खूब उभारनेवाली इन कविताओं की सामान्य प्रवत्ति वस्तुतः आदर्षजीवन की व्याख्या ही रही है।

६. व्यंग्य चित्र

केरलीय हिन्दी व्यंग्य चित्रकारो में डॉ. वी. गोविन्द शेणाय और श्री पी.के. भास्करवर्मा प्रमुख है। इन दोनों के अनेक व्यंग्य लेख पत्र–पत्रिकाओं में बिखरे पड़े हैं। डॉ. गोविन्द शेणाय के तो अब तक ''मिस्टिक साहब का कुर्ता'' और ''आगे कौन हवाल'' नाम के दो व्यंग्य चित्र संग्रह प्रकाषित हुए है। ''मिस्टिक साहब का कुर्ता'' और ''आगे कौन हवाल'' 1971 में प्रकाषित हुई सिजमें प्रयुक्त व्यंग्य की तीक्ष्णता । उनके व्यंग्य चित्रों की तीक्षणता । भाषा को विषेष रूप से प्रभावूपर्ण बनाती है। श्री. टी.के. भास्करवर्मा भी सषक्त व्यंग्यकार है। उनके कई व्यंग्य चित्र प्रकाषित हुए है जिनमें से 'केरल ज्योति' मई 1971 अंक में प्रकाषित ''आपकी भलाई के लिए'' तथा अप्रैल 73 अंक में प्रकाषित ''टिप टिप मामा'' और नवम्बर 73 में प्रकाषित 'चेतावनी' विषेष स्थान रखते है। हास्य की भूमिका निभाने योग्य हिन्दी के ठेठ प्रयोगों को उन्होंने अपने लेखों में बिठाया है।

७. मौलिक नाटक एवं एकांकी

मौलिक हिन्दी नाटक रचना में केरल के हिन्दी लेखकों ने कम ध्यान दिया है। इस कारण यही प्रतीत होता है कि हिन्दी नाटकों को रंगमंचीय प्रस्तुतीकरण के लिऐ केरल में बहुत कम अवसर मिलता है। पूर्ण मौलिक हिन्दी नाटक

लिखने तथा प्रकाषित करने का श्रेय श्री एन. चन्हषेखरन नायर को है। ''सेवाश्रम'' शीर्षक से उनका एक पूर्ण नाटक सन् 1868 में प्रकाषित हुआ है। यह एक ऐतिहासिक नाटक है, ये तीन अंको में प्रकाषित है। केरल के हिन्दी निबंधकारो और आलोचकों के बीच स्व. वासुदेवन पिल्ले, स्व. चन्द्रहासन श्री.पी.के. केषवन नायर श्रीमती रत्नमयी देवी दीक्षित, स्व. भास्करन नायर, डॉ. विष्वनाथ अययर, श्री एन. वी. कृष्ण पारिवार, श्री के. रवि वर्मा, श्री चन्द्रषेखर नायर, डॉ. रामन नायर, श्रीमती लक्ष्मी कुट्टी अम्मा, डॉ. सरलादेवी आदि के नाम विषेष रूप से उल्लेखनीय है।

स्व. वासुदेवन पिल्ले, केरल हिन्दी प्रचार सभा के संस्थापक एवं 'राष्ट्रवाणी पत्रिका के संपादक थे। 'राष्ट्रवाणी' के सन 1953–54 के अंको में उनके स्वागत, स्वपन, 'प्रेम के पत्र' 'कांग्रेसी नेता' 'समाजवादी नेता' शीर्षको से कई निबंध प्रकाषित हुए है। केरल के हिन्दी जगत में जो साहित्यिक प्रयास हुए है उनका ऐतिहासिक और प्रामाणिक विवरण भी ग्रंथ में दिया गया है। 1971 में ही डॉ. सरलादेवी का ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य में नारी' प्रकाषित हुआ है। दो खण्डो में विभाजित पुस्तक के अंतर्गत वैदिककाल से लेकर मध्यकाल तक के साहित्य में नारी की जो स्थिति रही उसका सर्वांगीण विवेचन है, दूसरे खण्ड में आधुनिक काव्य में नारी के विविध रूप–चित्रणों का विषद विष्लेषण प्रस्तुत है।

८. हिन्दी पत्रकारिता

हिन्दी भाषा और साहित्य को केरल के योगदान के अंतिम पहल के रूप में केरल की हिन्दी पत्रकारिता की बात कहीं जा सकती है। हिन्दी साहित्य की सेवा और पत्रिका प्रकाषन का शौक सन् 1940–50 में केरल में बड़ी तेजी से बड़ा था, स्वातंत्रय पूर्व काल में केरल के हिन्दी प्रचार केन्द्रो से हस्तलिखित पत्रिकाएँ निकलती थी। केरल प्रदेष में राष्ट्रभारती हिन्दी का जबरदसत प्रभाव बढ़ते देखकर मलयालम पत्रिकाएँ हिन्दी को अनुवाद के स्तम्भ के जरिये सम्मान देने लगी स्वातंत्रय पूर्व काल में प्रकाषित 'हिन्दीमित्र' केरल की प्रथम स्वतंत्र हिन्दी पत्रिका है। 'हिन्दी मित्र का प्रथम अंक संभवत अगस्त 1941 में निकला था। यह पत्रिका साहित्य के साथ – साथ हिन्दी के प्रचार के पक्ष पर भी जोर देती थी। इसके संपादक उत्साही हिन्दी प्रचारक विद्वान जी. नीलकंठन नायर थे। दूसरी पत्रिका 'ललकार थी। उत्तर और दक्षिण के लेखको की उच्च स्तर की रचनाएँ इसमें प्रकाषित होती थी। हिन्दी भाषा का प्रचार–प्रसार उत्तर व दक्षिण की सांस्कृतिक तथा साहित्यिक परम्पराओं का सामंजस्य आदि इस पत्रिका का लक्ष्य रहा था। लेकिन वर्ष भर ही यह पत्रिका निकल सकी। लगभग इसी समय दो हिन्दी प्रेमी ने मिलकर 'विष्वभारती' नाम की पत्रिका निकाली। इस पत्रिका का मुख्य ध्येय मलयालम एवं हिन्दी साहित्य को एक–दूसरे के निकट लाना था। केरल के हिन्दी प्रेमियों ने कई हिन्दी पत्रिकाएँ चलाई जिनमें 'अरिवंद' जिभासी ''राष्ट्रवाणी' 'प्रताप'' 'युगप्रभात' केरल भारती केरल ज्योति 'सहित्य मंडल पत्रिका' आदि प्रमुख है। केरल में प्रकाषित हिन्दी पत्रिकाओं के बीच 'त्रिमासी राष्ट्रवाणी' का अपना विषेष महत्व है। इसमें तीन भाषाओं –मलायालम, हिन्दी, तमिल में कविताएँ, कहानियॉ, लेख और अनुवाद छपते थे। यह त्रिभाषी पत्रिका प्रति सप्ताह निकलती थी। इन पत्रिकाओं के अलावा सहकारी हिन्दी प्रचारक केरल पत्रिका भाव और रूप जैसी पत्रिकाओं के नाम भी लिए जा सकते हैं। वस्तुतः केरल में प्रकाषित सभी हिन्दी पत्रिकाओं के प्रमुख उद्देष्य हिन्दी प्रचार आंदोलन को शक्ति देना और राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाना है।

९ शोधसार

जिस प्रकार इन्द्रधनुष में अनेक रंग होते और ये सभी एक दूसरे से इतने समन्वित होते हैं कि हर रंग दूसरे रंग का पूरक समझा जाता है, ठीक उसी प्रकार अन्य भारतीय भाषाओं का भी संबंध हिन्दी के संबंध हिन्दी के इन्द्रधनुषी रूप रंग से है। हिन्दी दो चार प्रदेषों या उत्तराखण्ड तक सीमित नहीं है परंतु उसका राष्ट्रव्यापी विस्तार हो चुका है। ऐसी स्थिति में भाषा और साहित्य दोनों क्षेत्रों में हिन्दी को इन्द्रधनुषी रूप गृहण करना है। आज समस्त भारतीय भाषओं के मध्य हिन्दी श्रंखला भाषा बन गई हे। इसे किसी प्रादेषिक शैली में बॉधकर नहीं रखा जा सकता। राष्ट्र भाषा में समूचे राष्ट्र का स्वरूप झलकना चाहिए। इससे ही हिन्दी अपना वास्तविक रूप निर्मित कर पायेगी ।

संदर्भ ग्रंथ

१. हिन्दी साहित्य को हिन्दीत्तर प्रदेषो की देन, डॉ. मलिक मोहम्मद पृष्ठ 1870–20, पृष्ठ 23 से 26
२. हिन्दी साहित्य को हिन्दीत्तर प्रदेषो की देन, डॉ मलिक रवीन्द्र नाथ – पृष्ठ 31,41, पृष्ठ 45,55,57